महर्षि-जीवन-दर्शक

अर्थात्

श्री स्वामी दयानन्दजी महाराज के प्रमुख जीवन-चरित्रों की अनेक भ्रान्तियों का निदर्शन व अनेक उपयोगी बातों का प्रदर्शन

डा० भवानी लाल भारतीय
पुस्तकालय
अधि. संख्या 622
विषय
दिनांक

लेखक

महेशप्रसाद, मौलवी आलिम फ़ाज़िल

गुरु विरजानन्द दण्डी
सन्दर्भ पुस्तकालय
परिग्रहण क्रमांक 977
दयानन्द महिला मह...
डा० भवानीलाल भारतीय

प्रकाशक

आलिम फ़ाज़िल बुकडिपो

११५ मुंहतशिमगंज, इलाहाबाद

डॉ० भ. ला. भारतीय
पुस्तकालय 622

सं० २००१ वि०

(सन् १९४४ ई०)

[मूल्य ॥)

मौलवी आलिम फ़ाज़िल महेशप्रसाद-कृत

कुछ पुस्तकें

महर्षि दयानन्द सरस्वती	।।।)	गाय और क़ुरान	-)
महर्षि-जीवन-दर्शक	।।)	बकर ईद	)।।
महर्षि दयानन्द कहाँ और कब	।)	अमर सत्यार्थप्रकाश	)।।
दयानन्द-काल में रेल-मार्ग	-)	सत्यार्थप्रकाश पर विचार	-)
महर्षि का अपूर्व भ्रमण	-)	सत्यार्थप्रकाश-विषयक भ्रम	)।।
श्री सर सैयद अहमद ख़ाँ और श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी	-)	विद्यामन्दिर	।-)
		मनोरंजक हिसाब	।-)
स्वामी दयानन्द और क़ुरान	।)	The Immortal Satyarth-Prakash	-)

'श्री सर सैयद अहमद ख़ाँ और श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी' में श्री स्वामी जी के सम्बन्ध में श्री सर सैयद महोदय का मत उर्दू, हिन्दी और अँगरेज़ी भाषाओं में है।

'The Immortal Satyarth Prakash' केवल अँगरेज़ी जाननेवालों के लिए काम की चीज़ है।

'विद्यामन्दिर' और 'मनोरंजक हिसाब' नाम की पुस्तकें बच्चों के लिए बड़ी उपयोगी हैं। अन्य पुस्तकें श्री स्वामीजी के जीवन व सत्यार्थप्रकाश से सम्बन्ध रखनेवाली हैं। ऐसी पुस्तकें शिवरात्रि, आर्य-समाज-स्थापना-दिवस, रक्षाबन्धन, सत्यार्थ-प्रकाश-दिवस, दीपावली तथा अन्य उत्सवों पर कम दाम पर बेचने अथवा प्रचारार्थ बाँटने के निमित्त बड़ी लाभदायक हैं। मिलने का पता—

मैनेजर आलिम फ़ाज़िल बुकडिपो,

११५ मुहतशिमगंज, इलाहाबाद

गुरु विरजानन्द दण्डी
सन्दर्भ पुस्तकालय

भूमिका

कुछ तो आत्मतृप्ति के लिए और साथ ही साथ कुछ लिखने के लिए मैंने श्री स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी के अनेक जीवन-चरित्रों तथा उनके जीवन से सम्बन्ध रखनेवाली कुछ अन्य चीज़ों को यथा-शक्ति भली भाँति पढ़ा और देखा कि अनेक बातें असन्तोषजनक हैं। कहीं किसी घटना का उल्लेख ठीक नहीं है तो कहीं किसी बात का समय ठीक नहीं लिखा गया है और कहीं कोई नाम अशुद्ध है—इत्यादि।

मेरे उक्त कथन की पुष्टि इस छोटी-सी पुस्तक के किसी अंश को देखने से हो सकती है। निदान मैंने सोचा :—

(१) महर्षि के प्रेमियों को अनेक भ्रान्तिपूर्ण बातों अर्थात् अशुद्धियों से अवश्य सचेत किया जाय।

(२) जो अशुद्धियाँ हैं उनको ही किसी समय शुद्ध समझा न जाय।

(३) महर्षि के जीवन के विषय में लिखनेवाले लोगों का ध्यान अनेक त्रुटियों की ओर भली भाँति रहे।

फलतः कुछ बातों के विषय में कारण और प्रमाण सहित लिख दिया है और साथ ही साथ कुछ उन बातों को लिखा गया है जिनको सम्मुख रखकर यदि महर्षि का जीवन-चरित्र तैयार किया जाय तो महर्षि का महत्त्व और अधिक बढ़ सकता है। आशा है, महर्षि-प्रेमी इस छोटी-सी पुस्तक से यथोचित लाभ उठावेंगे और यदि कोई त्रुटि मेरी ओर से हुई हो तो मुझे उससे सचेत करेंगे।

मेरी यह पुस्तक चैत्र शुक्ला पूर्णिमा सं० २००० वि० (सन् १९४३ ई०) को तैयार हो गई थी किन्तु काग़ज़ के अभाव से मई सन् १९४४ ई० में प्रकाशित हो सकी है।

महेशप्रसाद, मौलवी आलिम फ़ाज़िल—काशी

विषय-सूची

विषय			पृष्ठ
१—जीवनचरित्र व कुछ अन्य	...	...	१
२—सहायक पुस्तकें	...	...	३
३—भ्रान्तिमय स्थल :—	...	...	४
(१) छिनौर, छिनूर, छिन्नाड़े या चित्तौड़	...	...	४
(२) शिवपुरी में शीतकाल	...	...	६
(३) माना, मंग्रम या मग्रम	...	...	१२
(४) डुमराव में	...	...	१४
(५) कासगंज से छलेसर	...	...	१५
(६) स्वामीनारायण-मत-खण्डन	...	...	१६
(७) अहमदाबाद से बम्बई	...	...	१७
(८) आर्यसमाज लाहोर	...	...	१८
(९) हरिद्वार-कुम्भ	...	...	१९
(१०) काशी में अन्तिम बार	...	...	२०
(११) रद्दे-हनूद ?	...	...	२१
(१२) तोहफ़तुल हिन्द	...	...	२१
४—फ़र्रुख़ाबाद का इतिहास	...	...	२२
(१) त्रुटियों का प्रसार	...	...	२५
(२) कुछ बातों का अभाव	...	...	२६
(३) ग्रन्थ की महत्ता	...	...	२७
५—जीवन-चरित्रों पर एक और दृष्टि	...	...	२९
६—आवश्यकता है	...	...	३३
७—कुछ उपयोगी ग्रन्थ	...	...	४१

॥ ओ३म् ॥

महर्षि-जीवन-दर्शक

जीवनचरित्र व कुछ अन्य *

महर्षि स्वामी दयानन्दजी के जीवन-चरित्र तो अनेक हैं और अनेक भाषाओं में हैं ; परन्तु मैंने जिन जीवन-चरित्रों तथा महर्षि-जीवन से सम्बन्ध रखनेवाले जिन ग्रन्थों व उनके जिन संस्करणों को सम्मुख रखकर इस छोटी सी पुस्तक में थोड़ा-बहुत जो कुछ लिखा है वे ये हैं :—

१—महर्षि स्वामी दयानन्दजी का जीवन-चरित्र† जो कि उर्दू में श्री पंडित लेखरामजी द्वारा संगृहीत सामग्री के आधार पर श्रीमती आर्य-प्रतिनिधि सभा, पंजाब. लाहोर द्वारा प्रकाशित हुआ है। यह जीवन-चरित्र सन् १८९७ ई० में तैयार हुआ है। लाहोर में मुंशी गुलाबसिंह के प्रेस में प्रथम बार छपा है। कुल ९५० पृष्ठों से भी अधिक है और साढ़े बारह और साढ़े नौ इञ्च के आकार में है। इसके निमित्त इस ग्रन्थ में संकेत के रूप में ये शब्द लिखे गये हैं :—**'महर्षि दयानन्द—उर्दू'**।

---

* जिन ग्रन्थों के निमित्त संकेतरूप में जो शब्द इस पुस्तक में प्रयोग किये गये हैं उनका उल्लेख इसी शीर्षक के अन्तर्गत है।—लेखक।

† यह ऐसा ग्रन्थ है जिसमें श्री स्वामीजी के जीवन के विषय की सबसे अधिक सामग्री सबसे पहले प्रकाशित हुई है। इसके सहारे अनेक जीवन-चरित्र लिखे गये हैं ; परन्तु जो त्रुटियाँ इसमें हैं उनको दूर करने का उद्योग नहीं किया गया।—लेखक।

२—महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन-चरित्र *—श्री बाबू देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्यायजी द्वारा संगृहीत सामग्री के आधार पर श्री पंडित घासीरामजी द्वारा हिन्दी में लिखित और आर्य-साहित्य-मण्डल, अजमेर द्वारा दो भागों में प्रकाशित सं० १९९० वि० (प्रथम बार)। संकेतरूप में इस ग्रन्थ के निमित्त प्रयोग हुए शब्द ये हैं :—**'महर्षि दयानन्द—हिन्दी'**।

३—श्रीमद्दयानन्दप्रकाश—लेखक श्री स्वामी सत्यानन्दजी। तृतीय आवृत्ति सं० १९८० वि० (श्री दयानन्द जन्म शताब्दी संस्करण) हिन्दी में लाहोर से मुद्रित। कुल पृष्ठ ५५० से कुछ अधिक और आकार सात और पाँच इञ्च। इसके निमित्त पुस्तक में संकेत का शब्द यह है:—**'श्रीमद्दयानन्दप्रकाश'**।

इस जीवन-चरित्र का चलन बहुत अधिक है। छोटे अक्षरों के सिवा बड़े अक्षरों व आकार में भी इसके संस्करण हैं।

४—आर्य्यधर्मेन्द्रजीवन अर्थात् महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन-चरित्र (हिन्दी में)—लेखक श्री राव साहब रामविलास शारदा जी—वैदिक यंत्रालय, अजमेर से चौथी बार संवत् १९८१ वि० में प्रकाशित (हिन्दी में)। इसका भी मान आर्य-जगत् में कुछ कम नहीं है। इसके निमित्त संकेत का शब्द इस पुस्तक में यह लिखा गया है :—**'आर्यधर्मेन्द्रजीवन'**।

५—ऋषि दयानन्द स्वरचित (लिखित वा कथित) जन्म-चरित्र—श्री पंडित भगवत्दत्तजी द्वारा सम्पादित (हिन्दी में)—तृतीय आवृत्ति सं० १९७९ वि० में लाहोर से प्रकाशित। इसके

---

* हिन्दी में इससे बड़ा जीवन-चरित्र अब (सन् १९४३ ई०) तक कोई और प्रकाशित नहीं हुआ है। यह साढ़े नौ और सवा छः इञ्च आकार के ८०० पृष्ठों से भी कुछ अधिक में है।—लेखक।

लिए संकेत के रूप में इस पुस्तक में केवल ये शब्द प्रयोग किये गये हैं :— **'जन्म-चरित्र'**।

६—थियासोफ़िस्ट (Theosophist) के अङ्क :—
(क) अक्तूबर सन् १८७९ ई० (पृ० ९ से १२ तक),
(ख) दिसम्बर सन् १८७९ ई० (पृ० ६६ से ६८ तक),
(ग) नवम्बर सन् १८८० ई० (पृ० २४ से २६ तक)।

ज्ञात रहे कि थियासोफ़िस्ट नाम की मासिक पत्रिका साढ़े बारह और साढ़े आठ इञ्च के आकार में अँगरेजी भाषा में पहले बम्बई से प्रकाशित हुई थी। श्री स्वामीजी का जीवन-वृत्तान्त सबसे पहले इसी पत्रिका के उक्त अङ्कों में प्रकाशित हुआ है। इस पत्रिका के उक्त समस्त अङ्क हिन्दू-विश्वविद्यालय, काशी के पुस्तकालय में हैं। इसी अमूल्य पुस्तकालय के अङ्कों से मैंने लाभ उठाया है।

७—*फ़र्रुख़ाबाद का इतिहास—श्री पंडित गणेशप्रसाद शर्माजी* द्वारा (हिन्दी में) लिखित और आर्य-समाज फ़र्रुख़ाबाद द्वारा सन् १९३१ ई० में प्रकाशित।

सहायक पुस्तकें

श्री स्वामी दयानन्दजी कृत :—

(१) शिक्षा पत्री ध्वान्त निवारण (संस्कृत व हिन्दी) अर्थात् स्वामिनारायण मत खण्डन।

(२) भ्रमोच्छेदन (हिन्दी)।

दयानन्द-ग्रन्थमाला—'शताब्दी संस्करण'—द्वितीय भाग में प्रकाशित सन् १९८१ वि० (सन् १९२५ ई०)।

---

(३) ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन—द्वितीय भाग, प्रकाशित सन १९१९ ई०।

(४) ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन--तृतीय भाग प्रकाशित सन् १९२७ ई०।

उक्त दोनों सम्पादित श्री पं० भगवत्दत्तजी द्वारा (लाहोर) हिन्दी में।

(५) दयानन्द-चित्रावली--(हिन्दी) प्रथम संस्करण--प्रकाशित सं० १९८२ वि०, श्री गोविन्दराम हासानन्दजी द्वारा कलकत्ता से।

भ्रान्तिमय स्थल

श्री स्वामी दयानन्दजी महाराज के अनेक जीवन-चरित्र अनेक लोगों ने भिन्न-भिन्न समयों व भाषाओं में लिखे हैं। अनेक जीवन-चरित्रों के अनेक संस्करण भी निकले हैं। कुछ जीवन-चरित्रों का चलन भी बहुत ज्यादा है; परन्तु जीवन-चरित्रों के भ्रान्तिमय अथवा असन्तोषजनक अनेक स्थलों या बातों की ओर संभवत: हमारे लेखकों व पाठकों का ध्यान बिल्कुल गया ही नहीं। और यदि गया है तो उनको ठीक करने का उद्योग ही नहीं किया गया अथवा बहुत कम किया गया है। खैर, जो हो सो हो। मुझे जो बातें ठीक नहीं प्रतीत हुईं उनमें से थोड़ी-बहुत बातों का उल्लेख कारण व प्रमाण सहित कर रहा हूँ।

छिनौर, छिनूर, छिन्नाड़े या चित्तौड़

१—I proceeded to Chhinour. (The Theosophist—October 1879. P. 12. Column 2. Lines 42, 43,)

२—एक कृष्ण शास्त्री छिनौर शहर के बाहर रहते थे। ('जन्म-चरित्र' पृ० २४)

३—चित्तौड़ या छिनौड़ शहर को गया। ('महर्षि दयानन्द—उर्दू' पृ० १३ पंक्ति ६)

४—सुना कि छिन्नाड़े में कृष्ण शास्त्री नाम का.....। ('श्रीमद्दयानन्दप्रकाश' पृ० २६, वैराग्य काण्ड का चौथा सर्ग)

५—दयानन्द छिनूर चले गये। ('महर्षि दयानन्द—हिन्दी' पृ० ३९)

६—कुछ पुस्तकें पढ़कर छिन्नाड़े को गये। ('आर्य्यधर्मेन्द्र-जीवन' पृ० १३. शीर्षक—योगानन्द स्वामी से योग सीखना)

भूगोल व नक़शों द्वारा जहाँ तक हो सका, मैंने ख़ूब ढूँढ़ा। इस नाम अथवा इससे मिलते-जुलते नाम का कोई स्थान नहीं मिला। छिन्नोर के बदले 'चित्तौड़' समझना ठीक नहीं। श्री स्वामीजी महाराज उस समय विद्या पढ़ने व योग-अभ्यास सीखने की धुन में थे। चित्तौड़ इन बातों के लिए उचित प्रतीत नहीं होता। नर्मदा नदी के तट का ही कोई स्थान ऐसा प्रतीत होता है जहाँ वे गये होंगे। चित्तौड़ तो व्यासाश्रम से उत्तर व कुछ पूर्व की ओर २२५ मील से कम दूर नहीं। यदि वे चित्तौड़ गये होते तो संभवत: उसका उल्लेख उस ढंग से न होता जिस ढंग से कि उनके चरित्रों में है। फलत: उस समय चित्तौड़ जाना किसी दशा में भी ठीक नहीं।

पत्र-व्यवहार, भूगोल व नक़शों से सिनोर नामक स्थान का पता चलता है। यह स्थान नर्मदा के दाहिने तट पर अर्थात् नर्मदा नदी से उत्तर की ओर अब (सन् १९४३ ई० में) भी हिन्दू जनता की दृष्टि में एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। श्री स्वामीजी महाराज यहाँ पर व्यासाश्रम से संभवत: सं० १९०५ वि० में पधारे थे जो कि यहाँ से पूर्व ओर जलमार्ग से लगभग ८ मील और थल-मार्ग से लगभग ६ मील की दूरी पर है। यहाँ से चाणोद-कर्णाली पूर्व व उत्तर ओर नर्मदा के जल-मार्ग से लगभग १३ मील और थल-मार्ग से लगभग ९ मील पर है। गज़ेटियर व कुछ अन्य ग्रन्थों में सिनोर की बाबत जो कुछ लिखा हुआ मिलता है और श्री स्वामीजी महाराज उस समय जिस धुन में थे उससे मैं इसी नतीजे

पर पहुँचा हूँ कि सिनोर के बदले छिन्नोर या छिनोर छप गया है। बड़ौदा नगर से दक्षिण ओर मियागाम नामक स्थान १८ मील पर है। इस स्थान के रेलवे-स्टेशन से एक रेलवे-लाइन सिनोर को गई है जिसके द्वारा लगभग १८ मील पर पूर्व ओर (मियागाम से) सिनोर है। भड़ौंच से पूर्व ओर जल-मार्ग से लगभग ४५ मील और थल-मार्ग से सीधे लगभग २७ मील पर सिनोर पड़ता है।

शिवपुरी में शीतकाल ?

(१) There is a mountain peak known as the Shivapooree (town of Shiva) where I spent the four months of the cold season. (The Theosophist—December 1879. Column 1., P. 67., Lines 26, 27, 28)

(२) एक पहाड़ पर, जो कि शिवपुरी नाम से प्रसिद्ध है गया। यहाँ मौसिम सरमा के चार महीना गुज़ारे। ('महर्षि दयानन्द—उर्दू' पृ० १५, पंक्ति १ व २)

(३) एक पहाड़ पर, जो कि शिवपुरी के नाम से प्रसिद्ध है, गया। यहाँ शरद् ऋतु के चार मास व्यतीत किये। ('जन्म-चरित्र' पृ० २८, पंक्ति ३ व ४)

(४) शिवपुरी नाम शैलशृङ्ग पर पहुँचे और वहाँ ही शीत काल बिताया। ('महर्षि दयानन्द–हिन्दी' पृ० ४२)

(५) "वहाँ से चलकर दयानन्द काशीपुर होते हुए द्रोण-सागर आये और वहाँ शीतकाल अतिवाहित करने लगे। इस शीत ऋतु के समय संवत् १९१२ चलता होगा क्योंकि इससे पहले कहा जा चुका है कि गत वत्सर अर्थात् संवत् १९११ की शीत ऋतु उन्होंने शिवपुरी के शैलशृङ्ग पर अतिवाहित की थी। अस्तु, शीतकाल के अन्त में वह द्रोणसागर से नीचे उतरे और मुरादाबाद और सम्भल होते हुए गढ़मुक्तेश्वर की अनुगाङ्ग भूमि में आकर पहुँचे।

इस मनोहर और विस्मयकारक भ्रमण-वृत्तान्त से सिद्ध होता कि प्रकृत योगियों के अन्वेषण में दयानन्द ने उत्तराखण्ड में दो वर्ष से कुछ कम समय लगाया।" ('महर्षि दयानन्द-हिन्दी'—पृ० ४७)

(६) एक पर्वत-शिखर "शिवपुरी" नाम से प्रख्यात है। स्वामीजी उस पर गये। वहाँ उन्होंने शरद् ऋतु के चार मास व्यतीत किये। ('श्रीमद्दयानन्दप्रकाश'—पृ० ३१, वैराग्य काण्ड का चौथा सर्ग)

(७) 'आर्यधर्मेन्द्रजीवन' में शिवपुरी के बदले सिद्ध आश्रम लिखा हुआ है, किन्तु इसमें भी यही है कि शरद् ऋतु के चार मास व्यतीत किये। (आर्यधर्मेन्द्रजीवन—पृ० १६। शीर्षक—रुद्रप्रयाग और सिद्ध आश्रम को जाना)

उक्त समस्त उद्धरणों से कम से कम तीन बातें अवश्य मालूम होती हैं :—

(१) श्री स्वामीजी ने शिवपुरी नामक स्थान में जाड़ा बिताया।

(२) उद्धरण-संख्या ५ से स्पष्ट है कि सं० १९११ वि० का शीत-काल शिवपुरी में बिताया था।

(३) उद्धरण-संख्या ५ से ही यह भी स्पष्ट है कि उत्तराखण्ड में दो वर्ष से कुछ कम समय लगाया।

अब यदि समय व स्थान को दृष्टि में रखकर भली भाँति विचार किया जाय तो उक्त तीनों बातें ठीक नहीं प्रतीत होती हैं। वास्तव में उक्त तीनों बातों का सम्बन्ध एक दूसरी के साथ बहुत ज्यादा है। इस अवसर पर सबसे पहले यह कहना चाहता हूँ कि सं० १९११ वि० का शीतकाल उन्होंने शिवपुरी में कदापि नहीं बिताया, क्योंकि इस संवत् के अन्त में वे आबू से हरिद्वार पधारे थे :—

(१) It was in the year of Samvat 1911, that I first joined the Kumbh Mela at Hardwar. (The Theosophist. October 1879. Page 12., Column 2. Lines 65, 66, 67)

(२) संवत् १९१२ मुताबिक़ ११ अप्रैल सन् १८५५ ई० हरिद्वार के कुम्भ मेले की धूम सुनकर पहली ही बार वहाँ पहुँचा। ('महर्षि दयानन्द—उर्दू' पृ० १३, पंक्ति २० व २१)

(३) संवत् १९११ वि० के साल के अन्त में हरद्वार के कुम्भ के मेले में आके.....। ('जन्म-चरित्र'–पृ० २५। पंक्ति ११, १२)

(४) "वह संवत् १९११ में आबू से हरिद्वार आकर पहुँचे।" इस पर संग्रहकर्त्ता अर्थात् स्वर्गीय श्री लाला घासीरामजी की ओर से टिप्पणी है :—

संवत् १९११ का अन्तिम भाग समझना चाहिए, क्योंकि कुम्भ संवत् १९१२ के आदि में था। अतः संवत् १९११ के अन्त में ही कुम्भ का समारोह होना सम्भव है। ('महर्षि दयानन्द–हिन्दी'—पृ० ४०)

(५) स्वामीजी महाराज वैशाख संवत् १९१२ में होनेवाले कुम्भ के महामेले में हरिद्वार पधारे। ('श्रीमद्दयानन्दप्रकाश'—पृ० २८–वैराग्य काण्ड का चौथा सर्ग)

(६) संवत् १९१२ में पहली बार हरिद्वार के कुम्भ में जा पहुँचे। ('आर्य्यधर्मेन्द्रजीवन'—पृ० १४, शीर्षक "हरिद्वार के कुंभ के मेले में जाना।")

श्री महाराजजी संवत् १९११ वि० के अन्त में हरिद्वार पधारने के पश्चात् उत्तराखण्ड तथा शिवपुरी में गये थे तो सं० १९११ वि० का जाड़ा निश्चय रूप से आबू और हरिद्वार के मार्ग में व्यतीत हुआ होगा।

यदि यह माना जाय कि सं० १९१२ वि० का जाड़ा उन्होंने शिवपुरी में बिताया तो यह बात भी ठीक नहीं क्योंकि सं० १९१२ वि० के अन्त में वे कानपुर अथवा उसके समीप थे और इससे पूर्व का समय उन्होंने द्रोणसागर (ज़िला नैनीताल के काशीपुर के पास) में काटा था। एक ही संवत् में दो शीतकाल नहीं हो सकते।

यदि माना जाय कि द्रोणसागर में सं॰वत् १९१३ वि॰ का जाड़ा बिताया तो यह बात भी ठीक नहीं ठहरती कि द्रोणसागर के सं॰ १९१३ वि॰ के जाड़ा के पश्चात् सं॰वत् १९१२ वि॰ के अन्त में कानपुर या उसके निकट पहुँचना हो। वास्तव में कानपुर या उसके निकट में सं॰वत् १९१२ वि॰ के अन्त में पहुँचे थे :—

(१) I was entering Cawnpur by the road east of the Cantonment, the Samvat year of 1912 was completed. (The Theosophist: November 1880. Page 25. Column 1. Lines 66, 67, 68)

(२) मैं छावनी के मशरिक़ जानेवाली सड़क से कानपुर को जानेवाला था तो सं॰वत् १९१२ विक्रमी ख़तम हुआ। ('महर्षि दयानन्द-उर्दू' पृ० १९, पंक्ति ९ व १०)

(३) छावनी की पूर्व दिशावाली सड़क से कानपुर जानेवाला था, जब सं॰वत् १९१२ विक्रम समाप्त हुआ। ('जन्म-चरित्र'—पृ० ३८, पंक्ति १६, १७, १८)

(४) कानपुर पहुँचे। उस समय सं॰वत् १९१२ समाप्त हो चुका था। ('महर्षि दयानन्द-हिन्दी'—पृ० ४८)

(५) स्वामीजी सं॰वत् १९१२ के अन्त में फ़र्रुख़ाबाद पहुँचे। ('आर्य्यधर्मेन्द्रजीवन'—पृ० २१, शीर्षक "द्रोणसागर से मुरादाबाद . मुर्दे की परीक्षा करना")

(६) सं॰वत् १९१२ की समाप्ति पर स्वामीजी फ़र्रुख़ाबाद गये। ('श्रीमद्दयानन्दप्रकाश'—पृ० ४०—वैराग्यकाण्ड का छठा सर्ग)

जब कि यह बात स्पष्ट है कि सं॰ १९१२ वि॰ के अन्त में कानपुर या उसके समीप में पहुँचे थे, सं॰ १९११ वि॰ के अन्त में हरिद्वार पहुँचे थे, हरिद्वार के पश्चात् उत्तराखण्ड में गये थे और उत्तराखण्ड की यात्रा के पश्चात् कानपुर पहुँचे थे तो

उत्तराखण्ड में उनके भ्रमण का काल एक वर्ष से भी कम ठहरता है और वह सम्वत् १९१२ वि० का ही समय ठहरता है।

इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि सं० १९१२ वि० का जाड़ा उन्होंने द्रोणसागर में बिताया था। यदि शिवपुरी में सं० १९१२ वि० का जाड़ा बिताया होता तो उस जाड़े के पश्चात् श्रीनगर, गुप्तकाशी, गौरीकुण्ड, भीमगुफा, त्रियुगीनारायण, श्रीनगर (दुबारा), तुङ्गनाथ, ऊखीमठ, गुप्तकाशी (दुबारा), जोशीमठ, बदरीनारायण आदि की यात्रा करनी, द्रोणसागर में जाड़ा व्यतीत करना और मुरादाबाद, सम्भल, गढ़मुक्तेश्वर, फ़र्रुखाबाद आदि होकर पैदल सं वत् १९१२ वि० के अन्त में कानपुर या उसके समीप में पहुँचना सर्वथा असम्भव है। मेरा ख़याल है कि यदि कोई व्यक्ति कोई भी नक़शा अपने सम्मुख रखकर मेरे कथन पर विचार करेगा तो मेरी बात पर उसको कदापि तनिक भी सन्देह न होगा।

अब प्रश्न यह उठता है कि इस समस्या की जटिलता कैसे दूर हो? मेरे विचार से सारी समस्या के ठीक होने के लिए इसके सिवा और कोई बात नहीं कि समस्त लेखों का जो यह भाव है कि श्री स्वामीजी महाराज ने शीतकाल के चार मास शिवपुरी में व्यतीत किये हैं उसके स्थान पर यह माना जाय—वर्षाकाल के चार मास शिवपुरी में व्यतीत किये।

सं वत् १९१२ वि० में एक श्रावण अधिक हुआ था। ऐसी दशा में यह मानना ठीक होगा कि आषाढ़, दो श्रावण और एक भादों—कुल चार मास उन्होंने शिवपुरी में व्यतीत किये। ऐसी दशा में अनेक स्थानों में होते हुए द्रोणसागर में सं वत् १९१२ वि० का जाड़ा व्यतीत करना ठीक होता है और सं वत् के अन्त में कानपुर या उसके समीप में पहुँचना भी ठीक होता है। फलतः मेरे विचार से बातें इस प्रकार ठीक हैं :—

(१) श्री स्वामीजी महाराज ने शिवपुरी में सं वत् १९१२ वि०

का वर्षाकाल व्यतीत किया था। और इस संवत् का शीतकाल द्रोणसागर में व्यतीत किया था।

(२) उत्तराखण्ड में साल भर से कुछ कम ही वे रहे थे।

(३) संवत् १९११ वि० में न तो वे शिवपुरी में पहुँचे थे और न वहाँ जाड़ा काटा था।

हाँ, यह भी ज्ञात रहे कि अनेक जीवन-चरित्रों से इस बात का पता नहीं लगता कि संवत् १९१२ वि० के वर्षाकाल में श्री स्वामीजी महाराज कहाँ थे। शिवपुरी से पूर्व ग्रीष्म-काल की बाबत उल्लेख है और शिवपुरी के बाद शरद् ऋतु का वर्णन बहुतेरे जीवन-चरित्रों में मिलता है। इन दोनों कालों के बीच में ही वर्षाकाल पड़ता है। निदान इस बात से भी यही नतीजा निकलता है कि श्री स्वामीजी महाराज ने शिवपुरी में वस्तुतः वर्षाकाल व्यतीत किया था।

'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृष्ठ ४२ में लिखा हुआ मिलता है :—

"इस प्रकार केदारघाट में वर्षाकाल अतिवाहित करके दयानन्द उसी ब्रह्मचारी और दोनों पहाड़ी साधुओं को साथ लेकर वहाँ से चल दिये और रुद्रप्रयाग और अगस्त्य मुनि के आश्रम आदि स्थानों में भ्रमण करते हुए शरत्काल समाप्त करके शिवपुरी नामक शैलशृंग पर पहुँचे और वहाँ ही शीतकाल बिताया।"

परन्तु 'Theosophist' ('थियासोफ़िस्ट') में लिखा है :—

"And when autumn was setting in, that I, with my companions, the Brahmachari and the two ascetics, left Kedar Ghat for other places. We visited Rudra Prayag and other cities, until we reached the shrine of Agast Munee.....Further to the north, there is a mountain peak known as the Shivapooree (town of Shiva) where I spent the four months of the cold

season;" (Theosophist—December 1879. Page 67. Column 1. Lines 22—27.)

'जन्म-चरित्र' में उक्त बात के सम्बन्ध में इस प्रकार उल्लेख है : —

"उसके पश्चात् ग्रीष्म ऋतु के आरंभ में अपने साथियों अर्थात् ब्रह्मचारी और दो पहाड़ी साधुओं सहित केदारघाट से दूसरे स्थानों को चला। और रुद्रप्रयाग आदि स्थानों में होता हुआ अगस्त्य मुनि की समाधि पर पहुँचा। आगे चलकर उत्तर की ओर एक पहाड़ पर, जो कि शिवपुरी नाम से प्रसिद्ध है, गया। यहाँ शरद् ऋतु के चार मास व्यतीत किये।" ('जन्म-चरित्र', पृ० २७ व २८)

उक्त बातों से सिद्ध है कि केदारघाट को ग्रीष्मकाल के आरंभ में श्रीस्वामीजी ने छोड़ा था। निदान 'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृष्ठ ४२, पंक्ति ११ में 'वर्षाकाल' के बदले 'वसन्त' शब्द होना चाहिए और उक्त पृष्ठ की पंक्ति १३ में 'शरत्काल' के बदले 'ग्रीष्मकाल' होना उचित है। पंक्ति १४ में 'शीतकाल' ठीक नहीं है—इसके बदले में 'वर्षाकाल' होना चाहिए। इस सम्बन्ध में पहले ही बहुत कुछ लिखा जा चुका है।

माना, मंग्रम या मग्रम

(१) मैंने उस नदी के दूसरी ओर एक बड़ा ग्राम मांस नामक देखा।...मंग्रम के निकटवर्ती प्रदेश से होता हुआ...। ('जन्म-चरित्र' पृ० ३२ व ३५)

(२) मैंने उस दरिया के दूसरी जानिब एक बड़ा गाँव मांस नामी देखा। .... और मंग्रम के कुर्ब व जवार से गुज़र कर.....। ('महर्षि दयानन्द—उर्दू' पृ० १६ की पंक्ति २२ व पृ० १७ की अन्तिम पंक्ति)

(३) नदी के दूसरे पार एक मांस नामक ग्राम देखा। .....और मग्रम के समीपवर्ती प्रदेशों से

होते हुए.....। ('श्रीमद्दयानन्दप्रकाश'—पृ० ३५ व ३८, वैराग्य काण्ड का पाँचवाँ सर्ग)

(४) दूसरी तरफ़ मांस नामी एक ग्राम था..... ठहरकर संगम के आस-पास होते हुए...। ('आर्य्यधर्मेन्द्रजीवन' पृ० १८ व १९, शीर्षक "बदरीनारायण जाना")

सं० १९१२ वि० में श्री स्वामीजी महाराज बदरीनाथ से अलकनन्दा नदी के स्रोत की ओर गये थे। मार्ग में अलकनन्दा के बायें तट की ओर माना नाम का स्थान पड़ा था। 'थियासोफ़िस्ट' में साफ़ लिखा है :—

I saw on its opposite bank the large village called "Mana."(November 1880. P.24. Column 2, Lines 26, 27)

किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि माना के बदले 'मांस' या 'मानस' क्योंकर लिखा गया। लौटते समय वे माना के निकट से होकर बदरीनाथ पहुँचे थे :—

Passing in the neighbourhood of Managram, I reached Badrinarayan. (The Theosophist—November 1880. P. 25. Column 1. Lines 3, 4, 5.)

किन्तु माना स्थान के लिए मंग्रम लिखा हुआ है। वास्तव में माना के साथ अँगरेज़ी का विलेज (Village) शब्द नहीं लिखा गया बल्कि संस्कृत का ग्राम शब्द जोड़ दिया गया है। इस कारण माना से मंग्रम या मनगरम हो गया।

गढ़वाल ज़िले का गज़ेटियर इस नाम से अँगरेज़ी में प्रकाशित है :—

District Gazetteer—U. P. of Agra and Oudh—Garhwal—Volume XXXVI. By H. G. Walton I. C. S.—Printed at Government Press, Allahabad 1910.

इस गज़ेटियर में ज़िले का जो नक़शा लगा हुआ है उसमें 'माना' है। बदरीनारायण से उत्तर की ओर लगभग डेढ़ मील की दूरी पर है। निदान स्थान का ठीक नाम 'माना' है। मांस या मंग्रम या मग्रम आदि किसी हालत में भी ठीक नहीं।

डुमराँव में

'महर्षि दयानन्द--हिन्दी' के पृष्ठ २१० में जो टिप्पणी है उसमें लिखा है—"देवेन्द्र बाबू के अनुसार स्वामीजी कलकत्ते जाते हुए डुमराँव गये थे और वहाँ से आरा चले गये थे, परन्तु पं० लेखराम के अनुसार वह कलकत्ते से लौटते हुए पहले आरा आये और पीछे डुमराँव गये।" इस विषय में यह जान लेना चाहिए कि पं० लेखरामजी द्वारा संगृहीत सामग्री के आधार पर जो 'महर्षि दयानन्द-उर्दू' में है उसके पृष्ठ ७८२ से सिद्ध है कि श्री स्वामीजी महाराज कलकत्ते जाते हुए भी डुमराँव में पधारे थे अर्थात् पं० लेखरामजी के अनुसार भी कलकत्ते जाते हुए और कलकत्ते से आते हुए भी श्री स्वामीजी ने डुमराँव को गौरवान्वित किया और यही मत श्री देवेन्द्र बाबू का भी है जैसा कि 'महर्षि दयानन्द-हिन्दी' के पृष्ठ २१० व २४५ से स्पष्ट है।

'महर्षि दयानन्द-हिन्दी' के पृष्ठ २१३ में टिप्पणी है :—

"पंडित लेखराम के अनुसार स्वामीजी ८ अगस्त सन् १८७३ अर्थात् श्रावण शुक्ला १५ को डुमराँव से मिर्ज़ापुर चले आये, देवेन्द्र बाबू के अनुसार वह आरा चले गये।"

मेरे विचार से यह बात ठीक नहीं कि देवेन्द्र बाबू के अनुसार श्री स्वामीजी डुमराँव से आरा चले गये। क्योंकि 'महर्षि दयानन्द-हिन्दी' के पृष्ठ २४५ में जो कुछ लिखा हुआ मिलता है उससे मानना पड़ता है कि देवेन्द्र बाबू के अनुसार भी श्री स्वामीजी डुमराँव से मिर्ज़ापुर पधारे थे और डुमराँव में उनका पधारना आरा से हुआ था।

कासगंज से छलेसर

'महर्षि दयानन्द—उर्दू' के पृ० ८६ में लिखा है :—

"दूसरी मरतबा स्वामीजी आख़िर संवत् १९३७ यानी सन् १८७४ ई०* में छलेसर आये।"

किन्तु दूसरी बार छलेसर में पधारने का उल्लेख उक्त चरित्र के पृष्ठ २१२ में इस प्रकार मिलता है :—

"२० दिसम्बर सन् १८७३ ई० शंब: मुताबिक़ पौह सुदी १ संवत् १९३० कासगंज से रवाना होकर स्टेशन राजघाट पर स्वामीजी ने कर्णबास के ठाकुर साहबान से मुलाक़ात की और छलेसर की पाठशाला में क़याम फ़रमाया।"

'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृ० २५५ में यह लिखा हुआ मिलता है :—

"पौष शुक्ल १ संवत् १९३० अर्थात् २० दिसम्बर सन् १८७३ ई० को स्वामीजी कासगंज से छलेसर पधारे। उनके श्रद्धालु भक्तों ने राजघाट रेलवे-स्टेशन पर स्वागत किया। छलेसर आकर वह पाठशाला में ठहरे।"

उर्दू चरित्र के पृ० २६१ में और हिन्दी के पृ० २५५ में जो कुछ और लिखा हुआ मिलता है उससे स्पष्ट है कि श्री स्वामीजी कासगंज में लगभग १० दिन ठहरे थे और फिर छलेसर पधारे थे। अब मैं पहले यह बतलाना चाहता हूँ कि कासगंज से रेल द्वारा राजघाट स्टेशन पर पहुँचने के दो मार्ग हैं। एक हाथरस व अलीगढ़ का मार्ग है, दूसरा बरेली का मार्ग। किन्तु ज्ञात रहे कि कासगंज से बरेली तक ६४ मील का मार्ग है और रेल सन् १९०६ ई० में पूर्ण रूप से जारी हुई थी। कासगंज से राजघाट बरेली के मार्ग से रेल द्वारा लगभग १३८ मील है।

कासगंज से हाथरस जंकशन तक ३४ मील है और रेल का

---

* सन् १८७३ ई० और संवत् १९३० वि० ठीक है।—लेखक।

चलना जुलाई १ सन् १८८४ ई० को हुआ था। कासगंज से राजघाट स्टेशन, रेल द्वारा हाथरस व अलीगढ़ के मार्ग से, लगभग ८३ मील पर है। कासगंज से छलेसर का सीधा मार्ग पश्चिम व उत्तर ओर २७ मील से अधिक दूर नहीं। ऐसी दशा में विचार करने से ठीक बात यह प्रतीत होती है कि स्वामीजी अतरौली के मार्ग से सीधे छलेसर गये होंगे जब कि वे पैदल चलने के अच्छे अभ्यासी थे। ऐसा कदापि न किया होगा कि बिना रेल कासगंज से बरेली या हाथरस गये होंगे और फिर रेल से राजघाट गये हों और फिर छलेसर गये हों। यदि ऐसा हुआ होता तो अधिक समय लगता। लगभग १० दिन कासगंज में ठहरना न हो सकता और बरेली या हाथरस का उल्लेख अवश्य होता। वास्तविक बात यह है—'महर्षि दयानन्द—उर्दू' के पृ० २६१ और 'महर्षि दयानन्द-हिन्दी' के पृष्ठ ३८४ पर छलेसर के विषय में राजघाट का उल्लेख है वही बात अशुद्ध रूप से पहले भी लिख दी गई है। मैं फिर भी कहूँगा कि विचारशील पुरुष मुझसे अवश्य सहमत होंगे। हाँ, यह भी स्पष्ट रहे कि राजघाट स्टेशन से छलेसर लगभग १७ मील की दूरी पर दक्षिण ओर है।

स्वामीनारायण-मत-खण्डन

'महर्षि दयानन्द-हिन्दी' के पृष्ठ ३०९ में है :-

"स्वामीजी ने सूरत में ही स्वामीनारायण-मत-खण्डन पर एक पुस्तक लिखी।"

परन्तु पृष्ठ ३१६ में शब्द इस प्रकार हैं :—

"अहमदाबाद में स्वामीजी ने स्वामीनारायण-मत का खण्डन किया और स्वामीनारायण-मत-खण्डन नामक पुस्तक रची।"

अब स्वामीनारायण-मत-खण्डन अर्थात् शिक्षापत्री ध्वान्त निवारण नाम की पुस्तक के अन्तिम शब्दों पर दृष्टि डाली जाय तो पता चलता है कि रविवार एकादशी पौष कृष्ण १९३१ वि०

(३ जनवरी सन् १८७५ ई०) को पुस्तक की रचना समाप्त हुई थी क्योंकि अन्तिम शब्द ये हैं:—

* भूमिरामाङ्कचन्द्रब्दे सहस्यस्याऽसिते दले ।
एकादश्यामर्कवारे ग्रन्थोऽयम्पूर्त्तिमागमत् ॥

३ जनवरी सन् १८७५ ई० को श्री स्वामीजी राजकोट में थे। मेरे विचार से बात इस प्रकार हुई होगी—सूरत में लिखना आरंभ किया होगा अथवा लिखने का विचार किया होगा, अहमदाबाद में उक्त पुस्तक का अधिक भाग तैयार हो गया होगा और पूर्ण रूप से उसकी समाप्ति राजकोट में हुई होगी।

अहमदाबाद से बम्बई

'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृष्ठ ३२२ की पंक्ति २७ से स्पष्ट है कि श्री स्वामीजी महाराज २७ जनवरी सन् १८७५ ई० को अहमदाबाद में अवश्य थे। २९ जनवरी सन् १८७५ ई० को अहमदाबाद से बम्बई लौट आये थे—यह बात पृष्ठ ३२९ के आरम्भ से स्पष्ट है। किन्तु पृष्ठ ३२६ व ३२७ में जो कुछ अङ्कित है उससे यह विदित होता है कि श्री महाराजजी २७ व २९ जनवरी सन् १८७५ ई० (अर्थात् अहमदाबाद व बम्बई) के बीच में—

(१) सूरत में ठहरे थे।
(२) बलसार में चार व्याख्यान दिये।
(३) बसीन रोड में चार दिन ठहरे।

अधिक कहने की आवश्यकता नहीं कि उक्त तीनों बातें उक्त समय के भीतर सर्वथा असम्भव हैं। मेरे विचार से ठीक यह है कि श्री स्वामीजी महाराज सन् १८७६ ई० में सूरत, बलसार व बसीन रोड में विराजे थे। पृष्ठ ३६४ की पंक्ति ११ व १२ में लिखा हुआ है :—

---

* दयानन्द ग्रन्थमाला—'शताब्दी संस्करण' द्वितीय भाग का पृ० ८२९—लेखक।

"स्वामीजी अहमदाबाद गये और वहाँ से बम्बई चले गये।"

फलतः सूरत, बलसार व बसीनरोड से सम्बन्ध रखनेवाली बातें इस अवसर पर ठीक बैठती हैं। जनवरी सन् १८७५ ई० में अहमदाबाद से सीधे बम्बई चले गये थे—इसकी पुष्टि 'महर्षि दयानन्द—उर्दू' के पृ० २३४ से भी होती है।

'श्रीमद्दयानन्दप्रकाश' के दसवें सर्ग के अन्त अर्थात् पृष्ठ २५२ व २५३ में बलसाड़ (बलसार) व बसई अर्थात् बसीनरोड को गौरवान्वित करने का वर्णन है। उसी ग्रन्थ के पृष्ठ २५२ में वर्णित है कि वे सं० १९३१ वि० में पौष की पूर्णमासी अर्थात् २१ जनवरी सन् १८७५ ई० को राजकोट से अहमदाबाद में आ विराजे थे और फिर बलसाड़ व बसीनरोड को गौरवान्वित करते हुए बम्बई में जा विराजे थे। निदान उक्त दोनों स्थानों के गौरवान्वित करने का मामला सन् १८७५ ई० अर्थात् सं० १९३१ वि० का न समझना चाहिए बल्कि जैसा कि पहले लिखा जा चुका है उसके अनुसार सन् १८७६ ई० अर्थात् सं० १९३२ वि० का समझना चाहिए।

आर्यसमाज लाहोर

'महर्षि दयानन्द—उर्दू' के पृ० ३१० में आर्य-समाज लाहोर के स्थापित होने का समय बतलाया गया है :—

"रविवार २४ जून सन् १८७७ ई०, जेठ सुदी १३ सं० १९३४ वि०, १२ जमादिस्सानी १२९४ हिजरी, आषाढ़ १२ संक्रान्ति"

'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृ० ४२२ में है :—

"जेठ शुक्ला १३ संवत् १९३४ वि० तदनुसार तारीख २४ जून सन् १८७७ को आर्यसमाज लाहोर की स्थापना हुई।"

अब यह जान लेना चाहिए कि संवत् १९३४ वि० में दो जेठ माने गये थे। ऐसी दशा में जब तक जेठ के साथ 'दूसरा' या 'अधिक' ऐसा शब्द न बढ़ाया जाय तब तक बात ठीक नहीं ठहर सकती। केवल जेठ लिखा जाना काफ़ी नहीं है।

हरिद्वार-कुम्भ

सन् १८७९ ई० में हरिद्वार का कुम्भ-मेला हुआ था। श्री स्वामीजी सहारनपुर, रुड़की और ज्वालापुर में ठहरते हुए हरिद्वार पहुँचे थे। 'महर्षि दयानन्द—उर्दू' के पृ० ६१४ व ६१५ और 'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृ० ५१९ में जो कुछ लिखा हुआ है उससे मालूम होता है :—

(१) सहारनपुर में उन्होंने दो व्याख्यान दिये अथवा केवल दो ही दिन ठहरे।

(२) रुड़की में वे एक ही दिन रहे।

(३) २० फ़रवरी १८७९ ई० को ज्वालापुर पहुँचे।

(४) २७ फ़रवरी १८७९ ई० अर्थात् फाल्गुन शुक्ला ६ को हरिद्वार में विराजमान हुए।

परन्तु यह भी ज्ञात रहे कि 'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृ० ५१९ की पंक्ति १० में "फाल्गुन शुक्ला ६, अर्थात् २० फ़रवरी सन् १८७९ ई०" लिखा हुआ है। इसमें २० फ़रवरी ठीक है और इस तारीख़ के अनुसार होना चाहिए :—"फाल्गुन कृष्णा १४ अर्थात् २० फ़रवरी सन् १८७९ ई०"

'श्रीमद्दयानन्दप्रकाश' में ज्वालापुर और हरिद्वार के विषय में सर्ग ८ में है :—

(१) फागुन सु० ६ सं० १९३५ को ज्वालापुर में पहुँचे—पृ० ३५६।

(२) फाल्गुन सुदी ६ संवत् १९३५ को स्वामीजी ज्वालापुर से हरिद्वार पधारे—पृ० ३५७।

श्री स्वामीजी के एक पत्र*—लिखित संवत् १९३५ मिति माघ शु०१० आदित्यवार (२ फ़रवरी सन् १८७९ ई०)—के आधार पर मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ :—

---

* 'ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन' तृतीय भाग का पृ० ११ व १२—लेखक।

(१) उन्होंने सहारनपुर में दो ही व्याख्यान दिये किन्तु वहाँ दो दिन से अधिक और चार दिनों से कम ही रहे।

(२) रुड़की में वे दो सप्ताह रहे।

फलतः सहारनपुर, रुड़की, ज्वालापुर और हरिद्वार में उनके आगमन और प्रस्थान का लेखा मेरे विचार से इस प्रकार है :—

स्थान	आगमन	प्रस्थान
सहारनपुर	१९३५ माघ शु०...	१९३५ माघ शु० १५
रुड़की	१९३५ माघ शु०१५	१९३५ फाल्गुन कृ०१४
ज्वालापुर	१९३५ फाल्गुन कृ०१४	१९३५ फाल्गुन शु० ६
हरिद्वार	१९३५ फाल्गुन शु०६	१९३६ वैशाख कृ० ८

काशी में अन्तिम बार

सन् १८७९ ई० अर्थात् सं० १९३६ वि० में श्री स्वामीजी महाराज काशी में दानापुर (दीनापुर) से किस तारीख या तिथि को पधारे थे, इस विषय में दो भिन्न-भिन्न लेख हैं।

श्री स्वामीजी कृत 'भ्रमोच्छेदन' नामक पुस्तक की भूमिका; * 'महर्षि दयानन्द—उर्दू' के पृष्ठ १६९ और 'श्रीमद्दयानन्दप्रकाश' के ग्यारहवें सर्ग के पृष्ठ ४०९ से पता चलता है कि गुरुवार कातिक शुक्ला चतुर्दशी १९३६ वि० अर्थात् २७ नवम्बर सन् १८७९ ई० को काशी को सुशोभित किया था †। परन्तु 'महर्षि दयानन्द—

---

* दयानन्द ग्रन्थमाला—'शताब्दी संस्करण', द्वितीय भाग का पृ० ८४७—लेखक।

† मासिक पत्रिका 'आर्यदर्पण' फ़रवरी सन् १८८० ई० के पृ० ४२ में जो कुछ लिखा हुआ मिलता है उससे पता चलता है कि २६ नवम्बर सन् १८७९ ई० को श्री महाराजजी काशी में पधारे थे। ३० दिसम्बर १९४१ ई० मंगलवार को मैंने 'आर्यदर्पण' का उक्त अङ्क मेरठ आर्यसमाज के पुस्तकालय में देखा है।—लेखक।

उर्दू' के पृ० ५०५; 'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृ० ५९२ और श्री स्वामीजी के एक पत्र—लिखित कार्तिक सुदी ८ शुक्रवार सं० १९३६ वि०—से यह साबित होता है कि दानापुर से काशी में पधारना १९ नवम्बर सन् १८७९ ई० अर्थात् कार्तिक शुक्ला ७ सं० १९३६ वि० को हुआ था।

मेरे विचार से १९ नवम्बर सन् १८७९ ई० को काशी में पदार्पण करना ठीक है, क्योंकि इस सम्बन्ध में श्री स्वामीजी का पत्र विशेष रूप से मानने योग्य है। यह पत्र एक सरकारी पोस्टकार्ड पर लिखा हुआ है। आद्योपान्त श्री स्वामीजी के हाथ का ही लिखा हुआ है। शनिवार २० जून १९४२ ई० को मैंने दानापुर में इस पत्र को देखा है। 'दयानन्द चित्रावली' नामक ग्रन्थ के प्रथम संस्करण संवत् १९४२ वि० के पृष्ठ ९ से पूर्व उक्त पत्र का चित्र छपा है और 'ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन' द्वितीय भाग पृ० २१ व २२ में उक्त पत्र की नक़ल प्रकाशित हो चुकी है। यह पत्र दानापुर आर्यसमाज के मन्त्री श्री बाबू माधवलालजी के नाम भेजा गया था।

हिन्दुओं के विरुद्ध एक प्रकाशित पुस्तक (उर्दू) का नाम 'महर्षि दयानन्द—उर्दू' के पृ० ८११ और 'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृ० ७८१ पर 'रद्दे-हनूद' (ردّ ہنود) लिखा हुआ मिलता है। परन्तु पुस्तक का ठीक नाम 'रद्द-हिन्दू' (ردّ ہندو) है। यह पुस्तक पहले-पहल मुहम्मद इदरीस बिन् अब्दुल्ला चलमाई द्वारा सन् १२६१ हिजरी अर्थात् सन् १८४५ ई० में बम्बई से प्रकाशित हुई थी। इसके अन्य संस्करण अन्य स्थानों से भी निकले हैं।

रद्दे-हनूद ?

'महर्षि दयानन्द—उर्दू' के पृ० ८११ और 'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृ० ७८१ में वर्णित है कि मौ० उबैदुल्ला ने 'तोहफ़तुल-

हिन्द' (تحفۂ الہند) नाम की पुस्तक सन् १२७४ हिजरी अथात् सन् १८५७ ई० या सन् १८५८ ई० में लिखी या प्रकाशित की। परन्तु जानना चाहिए कि उक्त पुस्तक पहले-पहल सन् १२६८ हिजरी अर्थात् सन् १८५१ या १८५२ ई० में लिखी गई थी अथवा यह कि इस सन् में लुधियाना से प्रकाशित हुई थी। उक्त समय के बाद इस पुस्तक के अनेक संस्करण भिन्न-भिन्न स्थानों से निकले हैं :—

(१) मतबा मुस्तफ़ाई दिल्ली सन् १२७२ व १२८८ हिजरी।
(२) मतबा हाशमी मेरठ सन् १२७७ हिजरी।
(३) मतबा फ़ारूक़ी दिल्ली सन् १२९१ हिजरी।

मेरी दृष्टि में सन १२७४ हिजरी का कोई संस्करण नहीं आया। सम्भव है, सन् १२७२ हिजरी के संस्करण को ही भूल से १२७४ हिजरी लिखा गया हो।

फ़र्रुख़ाबाद का इतिहास

श्री स्वामीजी के जीवन का जो सम्बन्ध फ़र्रुख़ाबाद नगर तथा इस नाम के ज़िले के साथ है उसका उतना पता किसी अन्य ग्रन्थ से नहीं लगता जितना 'फ़र्रुख़ाबाद का इतिहास' नामक ग्रन्थ से लगता है। यह इतिहास पण्डित गणेशप्रसाद शर्माजी द्वारा लिखा गया है और आर्यसमाज फ़र्रुख़ाबाद द्वारा सन् १९३१ ई० में प्रकाशित हुआ है। बड़े आकार के साढ़े चार सौ पृष्ठों से भी कुछ अधिक का एक अच्छा ग्रन्थ है। श्री स्वामीजी के सिवा आर्यसमाज से सम्बन्ध रखनेवाली अनेक बातों पर भी इसके द्वारा अच्छा प्रकाश पड़ता है। परन्तु ग्रन्थ में कुछ त्रुटियाँ हैं, जिनके प्रति मैं अपना विचार प्रकट कर देना चाहता हूँ ताकि इस उपयोगी

ग्रन्थ से जो लोग भविष्य में काम लेना चाहें वे सचेत रहें और अधिक त्रुटियाँ न बढ़ें।

(१) शृंगीरामपुर नामक स्थान गङ्गा के दाहने तट पर फ़र्रुख़ाबाद नगर से पूर्व-दक्षिण ओर लगभग १५ मील की दूरी पर है। इसके विषय में उक्त इतिहास (पृ० ६७) में लिखा गया है :—

"इसी संवत् १९२५ में फ़र्रुख़ाबाद से चलकर स्वामीजी शृंगीरामपुर पधारे।"

वास्तव में संवत् १९२५ के बदले १९२६ होना चाहिए, जैसा कि उक्त इतिहास से ही सिद्ध हो जाता है :—

(क) पृष्ठ ११३ से स्पष्ट है कि फ़र्रुख़ाबाद से सन् १८६९ ई० अर्थात् संवत् १९२६ वि० में शृंगीरामपुर, जलालाबाद और कन्नौज होते हुए कानपुर पधारे।

(ख) शृंगीरामपुर से जलालाबाद में पधारे थे। यह स्थान फ़र्रुख़ाबाद नगर से पूर्व-दक्षिण ओर लगभग ३५ मील पर है। पृ० ११३ के सिवा पृ० ७३ पर भी जो कुछ लिखा हुआ मिलता है उससे स्पष्ट है कि संवत् १९२६ वि० अर्थात् १८६९ ई० में शृंगीरामपुर से जलालाबाद में पधारे थे।

(२) जलालाबाद के विषय में सन् अथवा संवत् की संख्या तो ठीक है; परन्तु तारीख़ का अङ्क ३१ मई ठीक नहीं, जैसा कि इतिहास के पृ० ७३ पर लिखा है :—

"शृंगीरामपुर से चलकर स्वामीजी (सं० १९२६ विक्रमी ३१ मई सन १८६९ ई०) जलालाबाद पधारे।"

ज्ञात रहे कि पृ० ९६ से स्पष्ट है कि संवत् १९२५ पौष के आरम्भ में फ़र्रुख़ाबाद पधारे थे और लगातार लगभग छः मास तक फ़र्रुख़ाबाद में रहे थे। इतिहास के पृ० १०९ व ११२ से पता चलता है कि जेठ सुदी १० व ११ शनिवार व रविवार (सं० १९२६)

१९ व २० जून १८६९ ई० को फ़र्रुख़ाबाद में अवश्य विराजमान थे। इसके पश्चात् ही शृंगीरामपुर और जलालाबाद को इसी सन् व संवत् में सुशोभित किया था। निदान ३१ मई (सन् १८६९ ई०) अर्थात् जेठ बदी ६ (संवत् १९२६ वि०) के बदले जून या जेठ के अन्त की कोई तारीख़ या तिथि होनी चाहिए। फ़र्रुख़ाबाद से प्रस्थान करने की कोई तारीख़ या तिथि निश्चित नहीं है इसलिए शृंगीरामपुर व जलालाबाद के सुशोभित किये जाने के विषय में कोई तारीख़ या तिथि निश्चित नहीं की जा सकती। बल्कि बड़ी गड़बड़ बात यह है कि फ़र्रुख़ाबाद से प्रस्थान करने का जो महीना इतिहास में लिखा हुआ है वह भी ठीक नहीं है, जैसा कि अभी बतलाया जायगा।

(३) फ़र्रुख़ाबाद से प्रस्थान करके कानपुर पधारने की बाबत इतिहास के पृ० ११३ पर लिखा हुआ है :—

"स्वामीजी यहाँ से अगस्त के (१८६९ ई०) आरम्भ में शृङ्गीरामपुर, जलालाबाद और कन्नौज होते हुए कानपुर पधारे।"

स्पष्ट है कि कानपुर को गौरवान्वित करके ३१ जुलाई सन् १८६९ ई० अर्थात् श्रावण कृष्ण ८ सं० १९२६ वि० को श्री स्वामीजी ने कानपुर में बड़ा भारी शास्त्रार्थ किया था। इस बात का उल्लेख 'महर्षि दयानन्द—उर्दू' के पृ० ११३—१२० और ५९६—६१६ में तथा 'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृ० १४८—१५८ और कुछ अन्य जीवन-चरित्रों में मिलता है। ऐसी अवस्था में मानना पड़ता है कि श्रीस्वामीजी ने अगस्त के (१८६९ ई०) आरम्भ में फ़र्रुख़ाबाद से प्रस्थान नहीं किया था बल्कि ३१ जुलाई से बहुत पहले सम्भवतः जून अर्थात् जेठ के अन्तिम दिनों में किसी तारीख़ या तिथि को प्रस्थान किया होगा, क्योंकि उन्होंने फ़र्रुख़ाबाद से शृंगीरामपुर, जलालाबाद, कन्नौज, बिट्ठूर और मदारपुर को सुशोभित करने के पश्चात् कानपुर को गौरन्वान्वित किया था

और वे १९ व २० जून सन् १८६९ ई० अर्थात् जेठ सुदी १० व ११ सं० १९२६ वि० को फ़र्रुख़ाबाद में अवश्य थे, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है।

(४) इतिहास के पृष्ठ १४२ से पता चलता है कि श्री स्वामीजी महाराज सं० १९२८ वि० के भादों मास में फ़र्रुख़ाबाद पधारे थे। किन्तु 'महर्षि दयानन्द—उर्दू' के पृ० ७६ से पता चलता है कि भादों संवत् १९२८ वि० में श्री स्वामीजी कर्णबास व अनूपशहर में विराजमान थे। अतः भादों में फ़र्रुख़ाबाद पधारना असङ्गत बात है। मेरे विचार से ठीक बात यह है कि उन्होंने अगहन सं० १९२८ वि० में फ़र्रुख़ाबाद में पदार्पण किया था।

(५) जेठ सुदी १ संवत् १९३३ को फ़र्रुख़ाबाद से कासगंज की यात्रा की ओर श्री स्वामीजी के प्रस्थान करने का पता इतिहास के पृ० १२५ से लगता है। परन्तु ज्ञात रहे कि 'महर्षि दयानन्द—उर्दू' के पृ० २५६ और 'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृ० ३७४ से काशी पधारने का पता लगता है। निदान कासगंज का उल्लेख ठीक नहीं। कासगंज तो फ़र्रुख़ाबाद से पश्चिम व कुछ उत्तर की ओर है और श्री स्वामीजी महाराज की यात्रा पूर्व व कुछ दक्षिण की ओर काशी के निमित्त हुई है।

'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' (अर्थात् महर्षि दयानन्द का जीवन-चरित्र—आर्य-साहित्य-मण्डल, अजमेर द्वारा प्रकाशित) में फ़र्रुख़ाबाद सम्बन्धी घटनायें 'फ़र्रुख़ाबाद का इतिहास' नामक ग्रन्थ से मिलान करके लिखी गई हैं*। यही कारण है कि इतिहास की कुछ अशुद्धियाँ इस जीवन-चरित्र में आ गई हैं :—

त्रुटियों का प्रसार

(१) 'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृ० १४५ में लिखा है :—

---

* 'संग्रहकर्ता की भूमिका' का पृ० ६, पंक्ति १६ व १७—लेखक।

"स्वामीजी अगस्त सन् १८६९ की किसी तारीख़ को किसी से कुछ कहे बिना चल दिये और शृंगीरामपुर पहुँचे।"

(२) 'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृ० २०६ में है :—

"भाद्रपद मास सं० १९२८ में स्वामीजी ने अपने फ़र्रुख़ाबाद के अनुयायियों को पुनः दर्शन दिये।"

पहले कहा जा चुका है कि अगस्त के बदले जून या जेठ और भाद्रपद के बदले अगहन ठीक है। इस कारण फिर कुछ और लिखने की आवश्यकता नहीं।

गुरुवार ८ अक्तूबर सन् १९४२ ई० को मैं फ़र्रुख़ाबाद गया था। वहाँ आर्यसमाज मन्दिर में श्री स्वामीजी के आगमन व प्रस्थान के विषय का जो समय एक पत्थर पर अङ्कित कराकर लगाया गया है उसमें सं० १९२८ विक्रमी का भाद्रपद ही अङ्कित है। उस पत्थर में एक भूल और यह हुई है कि सं० १९३७ वि० के वैशाख के बदले जेठ अङ्कित है। वास्तव में उनका पधारना वैशाख सुदी ११ को हुआ था *।

कुछ बातों का अभाव

इतिहास में श्री स्वामीजी से सम्बन्ध रखने-वाली बहुत सी उपयोगी बातें हैं किन्तु कुछ बातें उसमें अङ्कित होने से रह भी गई हैं। निदान उदाहरणार्थ जानना चाहिए कि इन बातों का उल्लेख इतिहास में नहीं मिलता :—

(१) सं० १९१२ वि० के अन्तिम दिनों में श्री स्वामीजी महाराज फ़र्रुख़ाबाद नगर में पधारे थे। ('थियासोफ़िस्ट'—नवम्बर सन् १८८० ई०, पृ० २४ का कालम १ और जन्म-चरित्र का पृ० ३८)

---

* 'ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन' तृतीय भाग का पृ० २५—लेखक।

इस बात का उल्लेख 'फ़र्रुख़ाबाद का इतिहास' नामक ग्रन्थ में नहीं है। सम्भवतः इस कारण इस बात का उल्लेख उस पत्थर में भी नहीं है जो श्री स्वामीजी महाराज के आगमन और प्रस्थान के विषय का आर्यसमाज मन्दिर फ़र्रुख़ाबाद में लगाया गया है। श्री महाराज के इस आगमन और प्रस्थान से यह मानना पड़ता है कि उन्होंने अपने जीवन-काल में फ़र्रुख़ाबाद को ८ बार सुशोभित किया था।

(२) सं० १९१२ वि० के अन्तिम दिनों में फ़र्रुख़ाबाद से शृंगीरामपुर में जा विराजे थे। ('थियासोफ़िस्ट'—नवम्बर सन् १८८० ई०, पृष्ठ २४ का कालम १, और 'जन्म-चरित्र' का पृ० ३८)

(३) शुक्रुल्लापुर नाम की बस्ती फ़र्रुख़ाबाद नगर से पश्चिम व उत्तर ओर लगभग ८ मील की दूरी पर है। सं० १९२५ वि० के पौष के आरम्भ में यहाँ पधारे थे। ('महर्षि दयानन्द—उर्दू' का पृ० १०२ और 'महर्षि दयानन्द-हिन्दी' का पृ० १३२)।

यदि 'फ़र्रुख़ाबाद का इतिहास' भविष्य में छपे तो उक्त तीनों बातों को बढ़ा देना चाहिए अथवा पृथक् कागज़ पर छपाकर वर्तमान संस्करण में जोड़ देना चाहिए।

ग्रन्थ की महत्ता

मनुष्य भूल-चूक का पुतला है। फ़र्रुख़ाबाद के इतिहास में यदि त्रुटियाँ हुईं अथवा उसमें कुछ बातें रह गईं तो आश्चर्य की कोई बात नहीं। मैंने भी अनेक ग़लतियाँ की हैं और संभवतः भविष्य में भी करूँगा, तथापि यह कहे बिना नहीं रह सकता कि 'फ़र्रुख़ाबाद का इतिहास' आर्य-सामाजिक संसार के लिए असाधारण और फ़र्रुख़ाबाद की घटनाओं के निमित्त विशेष रूप से बहुत उपयोगी ग्रन्थ है। इससे अनेक बातों का संशोधन होता है। उदाहरणार्थ 'श्रीमद्दयानन्द-

प्रकाश' से सम्बन्ध रखनेवाली कुछ त्रुटियों (बातों) की बाब इतिहास की भूमिका के आधार पर* यहाँ लिखा जा रहा है :—

(१) पृ० १४० बारहवें सर्ग में मऊरशोदाबाद के बदले मुर्शदाबाद अशुद्ध लिखा हुआ है।

(२) पृ० १४२ तेरहवें सर्ग में पीताम्बरदास के बदले विश्व म्भरदास जी लिखा हुआ मिलता है। यह नाम ठीक नहीं है।

(३) पृ० १४४ तेरहवें सर्ग में लिखा है :—

"लाला जगन्नाथजी के यज्ञोपवीत पर ग्यारह पण्डित, प्रति दिन एक सहस्र गायत्री जप करने के लिए नियत हुए। यजमान को भी एक सहस्र गायत्री जप करनेका आदेश था।"

इतिहास के लेखक की भूमिका में लिखा है—

"लाला जगन्नाथप्रसादजी का यज्ञोपवीत धारण से पूर्व पंडितों के संग जप करना अघटित (ख़िलाफ़ वाक़ै) घटना है। लाल जी ने जनेऊ लेकर १ लाख गायत्री का जाप किया था न कि उससे पूर्व।"

(४) पृ० १४४ (सर्ग तेरहवाँ) में है :—

"मेरठ से हरिगोपाल शास्त्री को बुलाकर"

परन्तु ज्ञात रहे कि श्री गोपालशास्त्री बुलाये गये थे।

'हमारे स्वामी'† नाम की पुस्तक के पृ० ४७ में लाला पन्नीलाल के बदले ला० बंसीलाल अशुद्ध लिखा हुआ है।

निदान उक्त इतिहास के द्वारा अनेक अशुद्धियाँ, जो फ़र्रुख़ाबाद की घटनाओं से सम्बन्धित हैं और अनेक जीवनचरित्रों में जा पकड़ गई हैं, विशेष रूप से दूर हो सकती हैं। आशा है कि श्री स्वामीजी महाराज के प्रेमी इस ग्रन्थ से यथोचित लाभ उठावेंगे

---

* 'लेखक की भूमिका' शीर्षक का पृष्ठ १—लेखक।

† राजपाल एण्ड सन्स आर्यपुस्तकालय व सरस्वती आश्रम अनारकली लाहौर द्वारा ११वीं बार प्रकाशित जनवरी १९३८ ई०—लेखक।

जीवन-चरित्रों पर एक और दृष्टि

यह बात भली भाँति स्पष्ट रहे कि जितनी बातें पिछले पृष्ठों में लिखी गई हैं केवल उतनी ही असन्तोषजनक नहीं; बल्कि थोड़ी-बहुत और भी हैं और कुछ का रूप दूसरे ढङ्ग का है। उदाहरणार्थ जानना चाहिए :—

(१) बड़े व सुप्रसिद्ध स्थान किसी बड़े स्थान से किस ओर तथा कितनी दूरी पर हैं—इस बात का पता अन्य साधनों से लग सकता है। अतः छोटे-छोटे अप्रसिद्ध स्थानों की बाबत अच्छे ढंग से लिखा जाना आवश्यक था। जैसे :—

(क) ज़िला बुलन्दशहर के चासी (नाम के स्थान) की बाबत 'महर्षि दयानन्द—उर्दू' के पृ० ६४ में लिखा हुआ है :—

"यहाँ (अहार) से जाकर ढाई कोस चाशनी (चासी)* की कुटी में ठहरे।"

ज्ञात रहे कि ऊपर के शब्दों में यह नहीं उल्लेख किया गया कि अहार से चासी किस ओर है।

(ख) 'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृ० ६५० में मसूदा नाम के स्थान से श्री स्वामीजी महाराज के प्रस्थान का वर्णन इस प्रकार है :—

"रात्रि में वहीं (मसूदा) से ९ कोस पर हुरड़े में पहुँचकर ६-७ घण्टे विश्राम करने के पश्चात् रूपाहेली पहुँचे।"

मेरे विचार से उक्त वर्णन में इन बातों की कमी है :—

१—मसूदा से हुरड़े (हुरड़ा) किस ओर है अर्थात् दिशा का उल्लेख करना उत्तम था।

---

* चासी ठीक नाम है। चाशनी नाम ठीक नहीं। किन्तु ग्रन्थ में चाशनी लिखा हुआ मिलता है, इस कारण मैंने चाशनी भी लिखा है।—लेखक।

२—हुरड़े से रूपाहेली कितनी दूरी पर है और किस ओर है—इन बातों का उल्लेख आवश्यक था।

(२) (क) नासिक नाम के सुप्रसिद्ध तीर्थस्थान के वर्णन में 'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृ० २८१ में श्री स्वामीजी के दो व्याख्यानों के निमित्त लिखा हुआ मिलता है:—

"एक व्याख्यान नासिक के प्रसिद्ध राम-मन्दिर में हुआ और दूसरा ताप्ती नदी के तट पर"।

ज्ञात रहे कि गोदावरी नामक नदी के बदले में ताप्ती ठीक नहीं है।

(ख) भीमगुफा नाम का स्थान उत्तराखण्ड में केदारनाथ से दक्षिण ओर ४ मील पर और गौरीकुण्ड नाम के स्थान से उत्तर की ओर लगभग ३ मील पर है। परन्तु नहीं मालूम क्यों भीमगुफा के बदले 'आर्यधर्मेन्द्रजीवन' के पृ० १६ पंक्ति ११ में भीमगोड़ा लिखा गया है। ज्ञात रहे कि इस नाम का स्थान हरिद्वार के निकट है और भीमगुफा की चर्चा गौरीकुण्ड व गुप्त-काशी आदि के प्रसङ्ग में है इस कारण भीमगोड़ा * लिखा जाना ठीक नहीं।

'महर्षि दयानन्द—उर्दू' के ही पृ० ५४ में है—"रुड़की से २० कोस उरे मीरांपूर में भी किसी से दो रोज़ शास्त्रार्थ हुआ था।"

'महर्षि दयानन्द—हिन्दी' के पृ० १२७ में शहबाज़पुर के लिए यह लिखा हुआ मिलता है—"यह ग्राम सोरों से ४-५ कोस पर है।"

फलतः प्रत्येक जीवन-चरित्र ऐसा है जिसमें कोई न कोई बात अवश्य असंतोषजनक रूप में है—देखिए कि 'महर्षि दयानन्द—उर्दू' के पृ० ५३८ से प्रतीत होता है कि ४ जुलाई (सन् १८८२ ई०) को श्री महाराज जी इन्दौर में पधारे थे; परन्तु पृ० ५५५ से इन्दौर

---

* भीमगोड़ा नाम के स्थान से केदारनाथ नाम का स्थान उत्तर की ओर १४० मील से कम दूर नहीं है।—लेखक।

में पधारना मई सन् १८८२ ई० में बतलाया गया है और साथ ही साथ यह भी बतलाया गया है कि वह इन्दौर से खण्डवा गये थे। वास्तव में मई में इन्दौर और इन्दौर से खण्डवा में पहुँचना ठीक नहीं क्योंकि एक पत्र से स्पष्ट है कि वह खण्डवा से इन्दौर और फिर रतलाम में पहुँचे थे*।

अब एक प्रश्न यह है कि जीवन-चरित्रों की अनेक गोल-माल बातें मुझे क्योंकर मालूम हुईं ? वास्तविक बात यह है कि मैंने एक सूची बनानी आरंभ की कि महर्षि कहाँ पर कब रहे †। और जहाँ रहे या पधारे वह स्थान कहाँ है। इन बातों को ठीक ढंग से रखने के सिलसिले में अनेक बातें असन्तोषजनक प्रतीत हुईं और कुछ अन्य प्रकार की त्रुटियों का भी पता चला। उदाहरणार्थ जानना चाहिए कि श्री स्वामीजी ने जो 'स्वीकारपत्र' उदयपुर में लिखा था उसका ठीक समय इस प्रकार है :—

"संवत् १९३९ फाल्गुन कृष्णा ५ मंगलवार तदनुसार तारीख २७ फ़ेब्रुअरी सन् १८८३ ई०।"

किन्तु कम से कम निम्नलिखित ग्रन्थों में 'कृष्णा ५' के बदले शुक्ला ५ लिखा हुआ मिलता है :—

(१) दयानन्द ग्रन्थमाला—'शताब्दी संस्करण' द्वितीय भाग पृ० ९४७।

(२) स्वीकारपत्र—वैदिक यंत्रालय अजमेर से मुद्रित (सं० १९७४ में पंचम बार) का पृ० १।

(३) 'फ़र्रुख़ाबाद का इतिहास', पृ० २०७।

---

* 'ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन' का प्रथम भाग, पृ० १४—लेखक।

† इस बात का उल्लेख 'महर्षि दयानन्द कहाँ और कब' नाम की मेरी लिखी हुई पुस्तक में हुआ है। उसका दाम चार आना है—लेखक।

(४) आर्यडाइरेक्टरी—'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा' देहली द्वारा प्रकाशित सं० १९९८ वि० का पृ० ७५।

ध्यान रहे कि 'फाल्गुन कृष्णा ५' को २७ फ़रवरी पड़ती है और 'शुक्ला ५' को (१५ दिन आगे का) १३ मार्च पड़ता है। जीवनचरित्रों से स्पष्ट है कि श्री स्वामीजी महाराज फाल्गुन शुक्ला ५ सं० १९३९ वि०, अर्थात् १३ मार्च सन् १८८३ ई० को शाहपुरा में विराजमान थे। 'स्वीकार पत्र' उदयपुर में लिखा गया है और वे 'फाल्गुन कृष्णा ५' को उदयपुर को सुशोभित किये हुए थे। निदान २७ फ़रवरी अर्थात् 'फाल्गुन कृष्णा ५' ही ठीक है।

किसी को इस बात का भ्रम न हो कि मैं जीवन-चरित्रों की त्रुटियों का ही देखनेवाला हूँ अथवा जीवन-चरित्रों के लेखकों का केवल निन्दक हूँ। सच तो यह है कि मेरे हृदय में उन सब लोगों के लिए बड़ा उच्च स्थान है जिनके उद्योग से ऋषि-चर्चा बहुत फैली है। मेरे विचार से श्री पंडित लेखरामजी और श्री बाबू देवेन्द्रनाथजी मुखोपाध्याय के नाम श्री स्वामी दयानन्दजी के जीवन-चरित्र के सम्बन्ध में सदैव के लिए विशेष रूप से अमिट रहेंगे। परन्तु खेद है कि दोनों ऋषि-भक्त अपनी एकत्र की हुई अपूर्व सामग्री का स्वयं सम्पादन न कर सके थे। प्रत्येक की सामग्री दूसरों के द्वारा प्रयोग में लाई गई है। संभवतः बहुत कुछ यही मूल कारण है कि दोनों ऋषि-भक्तों की सामग्री के आधार पर जो जीवन-चरित्र लिखे गये हैं उनमें कहीं-कहीं छोटी-मोटी अनेक भूलें हैं। इस पर भी इस बात को कदापि न भूलना चाहिए कि जो कुछ सामग्री ऋषि के प्रेमियों ने जीवन-चरित्रों के लिए एकत्र की और उसके आधार पर जो कुछ लिखा गया वह सब यदि किसी भी रूप में प्रकाशित या सम्पादित न हुआ होता तो जो कुछ ऋषि-चरित्र के विषय में आज प्राप्त है उसके थोड़े-बहुत अंश से हम लोग इस समय (सन् १९४३ ई० में) अवश्य वंचित रह जाते। यदि कोई कहता है :—

सड़क पर नाव चला करती है

इस वाक्य को व्याकरणवाला अशुद्ध नहीं कहेगा, किन्तु न्यायशास्त्र का ज्ञाता इसको ठीक कहाँ मानेगा ? श्री स्वामीजी के जीवन-चरित्रों को लोगों ने लिखा, बहुत अच्छा किया; परन्तु तिथियों (समय) व स्थानों की बाबत जो कुछ लिखा उसे बहुत ठीक या यथोचित रूप से नहीं लिखा अथवा यह कि महर्षि कहाँ पर कब रहे और जहाँ रहे वह स्थान कहाँ है—इन बातों के विषय में जो कुछ लिखा गया उसे पूर्ण रूप से ठीक नहीं लिखा गया। निदान यह कह देना अत्यन्त आवश्यक है कि प्रत्येक जीवन-चरित्र में कुछ न कुछ संशोधन आवश्यक प्रतीत होता है।

आवश्यकता है

(१) श्री स्वामीजी महाराज के मुख्य जीवन-चरित्रों को भली भाँति पढ़ा जाय और उनके आधार पर एक अच्छा जीवन-चरित्र लिखा जाय।

(२) उनके पत्र जो दूसरों के नाम हैं अथवा दूसरों के पत्र जो उनकी सेवा में भेजे गये हैं—उन सब का, सावधानी के साथ, जीवन-चरित्र में उपयोग किया जाय*। पत्रों से कुछ स्थानों पर पहुँचने का समय निश्चित हो सकता है; परन्तु कहीं-कहीं पत्रों से ऐसा प्रतीत होता है कि जिस तारीख को कहीं पर पहुँचने का विचार महाराजजी ने किया, वहाँ वे किसी कारण से शायद नहीं पहुँचे। उदाहरणार्थ जानना चाहिए कि मार्गशीर्ष वदि २

---

* पत्रों, विज्ञापनों और ग्रन्थों आदि के विषय में क्या होना अथवा लिखा जाना चाहिए—इन बातों की बाबत विस्तार-पूर्वक 'महर्षि दयानन्द सरस्वती' व 'सत्यार्थप्रकाश की व्यापकता' नाम की पुस्तकों में लिख चुका हूँ। इनको भली भाँति पढ़ना चाहिए—लेखक।

बृहस्पतिवार सं० १९३७ वि० को आगरा पहुँचने के लिए देहरादून से एक पत्र* में लिखा किन्तु मार्गशीर्ष वदि ४ (२० नवम्बर सन् १८८० ई०) तक वे देहरादून में ही रहे†। निदान काफ़ी जाँच-पड़ताल के साथ तिथियों या तारीखों से काम लेने की आवश्यकता है।

(३) जिन स्थानों को महाराजजी ने गौरवान्वित किया है उनका आवश्यक परिचय दिया जाय‡। जिस समय महाराजजी वहाँ पधारे हैं उस समय अथवा उसके आस-पास के समय की जन-गणना बतलाई जा सके तो अच्छी बात होगी। अन्यथा ऐसे स्थान की जन-गणना वर्तमान काल की बतलाई जाय और जिस सन् के अनुसार जन-गणना बतलाई जाय उस सन् का उल्लेख भी होना अत्यावश्यक है।

पदारोपित स्थानों का अक्षांश व देशान्तर भी यथासंभव बतलाया जाय§ और यदि हो सके तो इस बात का भी उल्लेख रहे कि स्थान समुद्र के धरातल से कितनी उँचाई पर है।

---

* 'ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन', तीसरा भाग पृ० २४—लेखक।

† 'महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन-चरित्र', (हिन्दी) द्वितीय भाग, पृष्ठ ६२४—लेखक।

‡ जिस स्थान या नगर में जहाँ ठहरे उसका पता बतलाया जाय। यदि उस स्थान का स्वरूप कुछ और हो गया हो तो उसका भी उल्लेख होना चाहिए।—लेखक।

§ "The where is it" नाम की एक छोटी-सी पुस्तक गवर्नमेंट प्रेस कलकत्ता से सरकार द्वारा सन् १९२८ ई० में प्रकाशित हो चुकी है। ऐसे काम के लिए बड़ी उपयोगी होगी।—लेखक।

हाँ, पदारोपित स्थानों* की बाबत यदि ये बातें भी लिखी जायँ तो अच्छा ही है :—

(क) श्री स्वामीजी के पधारने के समय के आस-पास में वहाँ के हिन्दू, मुसलमान व ईसाई आदि लोग किस दशा में थे।

(ख) वहाँ पर यदि समाज स्थापित हुआ तो कब ? आर्यसमाज का वृत्तान्त। वहाँ से वेद-भाष्य या किसी अन्य कार्य के निमित्त क्या सहायता हुई ?

(ग) श्री स्वामीजी के जीवन-काल में उनकी कोई पुस्तक वहाँ से यदि प्रकाशित हुई तो कौन, कब और क्योंकर इत्यादि।

(घ) यदि वहाँ से उन्होंने कोई पत्र किसी को लिखा है तो ऐसे पत्र या पत्रों में से आवश्यक बातें दी जायँ।

(ङ) पाठशाला या किसी अन्य आवश्यक बात का उल्लेख किया जाय।

(च) विशेष व्यक्ति जो श्री स्वामीजी से मिले अथवा श्री महाराजजी का उनसे मिलना हुआ, उनका थोड़ा-सा परिचय दिया जाय। जैसे—Buhler Johann Georg, Monier Williams, श्री राजा जयकिशनदास, श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा, श्री महादेव गोविन्द रानडे, श्री भण्डारकर, श्री केशवचन्द्र सेन और जनाब सर सैयद अहमद ख़ाँ साहब इत्यादि।

(छ) जिनके साथ श्री स्वामी जी महाराज के शास्त्रार्थ हुए हैं उनका भी कुछ उल्लेख किया जाय।

(ज) श्री स्वामी जी महाराज का पधारना यदि किसी स्थान में अनेक बार हुआ अथवा किसी स्थान में अधिक समय तक

---

* स्थान में यदि रेलवे-स्टेशन है तो बस्ती स्टेशन से किस ओर तथा कितनी दूरी पर है, अथवा पदारोपित स्थान किस रेलवे-स्टेशन से निकट है। ऐसा उल्लेख भी लाभदायक है।—लेखक।

ठहरना हुआ है—ऐसी दशा में यह लिखना चाहिये कि वस्तुतः अथवा संभवतः मूल कारण क्या था। उदाहरणार्थ यह कहना अनुचित न होगा कि उदयपुर में लगातार लगभग ७ मास तक अर्थात् सं० १९३९ वि० अधिक श्रावण वदि १३ से फाल्गुन वदि ६ सं० १९३९ वि० तक विराजमान रहे। आनन्दपूर्वक रहे। इस बात के कारण बहुत सा लिखित कार्य हो सका। बंगाल में ईसाइयों और ब्रह्मसमाजियों का प्रभाव भारी था। वेदों के विषय में नाना प्रकार की भ्रान्तियाँ फैलाई गई थीं। अनेक अच्छे-अच्छे बंगाली ईसाई हो गये थे*। ऐसी दशा के कारण ही वे कलकत्ता में कुछ कम नहीं रहे। इत्यादि।

(४) श्री स्वामीजी के विषय में अनेक लोगों की जो शुभ सम्मतियाँ हैं अथवा किसी पत्र व पत्रिका आदि में उनकी मृत्यु पर जो विचार प्रकट किये गये हैं उन सबको जीवन-चरित्र के साथ एकत्र कर देना चाहिए†।

(५) जो कुछ लिखा जाय, उसका हवाला बहुत स्पष्ट रूप में दिया जाय अर्थात् पुस्तक का नाम, प्रकाशक का नाम, प्रकाशन का समय व संस्करण आदि, ताकि भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर किसी को निर्देश (हवाला)-सम्बन्धी पुस्तक आदि के ढूँढ़ने

---

* भारतवर्षीय स्त्रीष्ट्रियानों का जीवन-वृत्तान्त (The sketches of Indian Christians) हिन्दी में Christian Literature Society, United Provinces Allahabad, द्वारा सन् १९१० ई० में प्रकाशित। —लेखक।

† 'उषा', 'प्रकाश', 'आर्य गज़ट' और 'जन्म-शताब्दी का वृत्तान्त' तथा अन्य किसी में जो वृत्तान्त महाराज जी का ऐसा छपा हो जो किसी जीवन-चरित्र में न हो उसको भी एकत्र कर देना चाहिए।—लेखक।

में कठिनाई न हो और प्रत्येक व्यक्ति सुगमता के साथ सामग्री को खोज तथा प्राप्त कर सके।

(६) श्री स्वामीजी महाराज के कई जीवन-चरित्रों में आया है कि उन्होंने चक्राङ्कित सम्प्रदाय का खण्डन किया—स्वामी नारायण मत का खण्डन किया, इत्यादि। जहाँ कहीं ऐसी बात का उल्लेख हो वहाँ पर पुस्तक में टिप्पणी के रूप में यह होना अच्छा होगा कि इस सम्प्रदाय या मत का वर्णन सत्यार्थप्रकाश के अमुक समुल्लास अथवा अमुक पुस्तक में है।

(७) श्री स्वामीजी महाराज फ़र्रुख़ाबाद में पश्चिमोत्तर देश के लेफ्टिनेंट गवर्नर से मिले थे। अतः टिप्पणी में बतलाना चाहिए कि संयुक्त प्रान्त का ही नाम सन् १९०२ ई० से पहले पश्चिमोत्तर देश था और इस प्रान्त के सबसे बड़े अधिकारी को सन् १९२० ई० तक लेफ्टिनेंट गवर्नर कहा जाता था। इसी प्रकार की टीका आवश्यकतानुसार कहीं-कहीं होनी चाहिए।

मैंने जो कुछ लिखने के लिए ऊपर कहा है, संभव है कि कोई-कोई व्यक्ति उन सब बातों अथवा कुछ बातों का लिखा जाना आवश्यक न समझें; मेरा ख़याल है कि एक समय ऐसा अवश्य आयेगा जब कि श्री स्वामीजी की महत्ता उक्त बातों के जानने से ही और बढ़ेगी। लोगों की हार्दिक चेष्टा उनके विषय में उक्त बातों के सिवा संभवतः कुछ और भी जानने के निमित्त हो। निदान उक्त बातों का लिखा जाना कदापि अनुचित न होगा। मैं जिन पुस्तकों आदि का उल्लेख कर चुका हूँ उनसे बहुत लाभ हो सकता है। उनके सिवा यह भी बतला देना चाहता हूँ कि तिथियों व तारीखों के निमित्त ये पुस्तकें उपयोगी हैं :—

(१) Cowasjee Patell's Chronology, लेखक Cowasjee Sorabjee Patell, लंदन से सन् १८६६ ई० में Trubners & Co द्वारा प्रकाशित।

(२) Oriental Eras, लेखक Thomas Mccudden. सन् १८४६ ई० में American Mission Press, Bombay में छपी।

(३) Chronological Tables, लेखक J. F. M. Reid Esqr और Girish Chandra Tarkalankar सन् १८५५ ई० में भवानीपुर से श्रीनाथबनर्जी एण्ड ब्रदर्स द्वारा प्रकाशित।

(४) Book of Indian Eras, लेखक Alexander Cunningham. सन् १८८३ ई० में कलकत्ता से Thacker, Spink and Co द्वारा प्रकाशित।

(५) An Indian Efemeries श्री L. D. Swami Kannu दीवान बहादुर द्वारा रचित और गवर्नमेण्ट प्रेस मद्रास द्वारा प्रकाशित सन् १९२२ ई०। यह सात खण्डों में है।

चन्द्र मास की तिथियाँ कम या ज्यादा भी हो जाया करती हैं। इस कारण कहीं पर केवल तिथियों का ही उल्लेख न किया जाय बल्कि तिथि व तारीख (ई०) भी दिन के नाम सहित दी जाय। इस बात के लिए उपर्युक्त पुस्तकें बड़े काम की हैं।

श्री स्वामीजी महाराज के पत्रों अथवा उनके ग्रन्थों आदि में यदि कोई समय विक्रमीय संवत् के अनुसार हो तो उसे पहिले लिखा जाय और उसके पश्चात् ईस्वी या सौर पञ्चाङ्ग से सम्बन्ध रखने वाला समय लिखा जाय अथवा यह कि यदि कोई समय ईस्वी सन् के अनुसार अङ्कित हो तो उसको पहले लिखा जाय और उसके बाद विक्रमीय संवत् के अनुसार वाला समय लिखा जाय। हाँ, जहाँ कहीं विक्रमीय व ईस्वीय दोनों प्रकार की तिथियाँ (तारीखें) हों उनको उसी प्रकार रहने देना चाहिए अर्थात् उनको आगे-पीछे करने की आवश्यकता नहीं।

जिस किसी संवत् में दो मास माने गये हैं उनका ध्यान रखा जाय।

हाँ, यह भी अवश्य जान लेना चाहिये कि श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के जन्म काल (सं० १८८१ वि०) और मृत्यु समय (सं० १९४० वि०) के बीच में जिन संवतों में जो मास अधिक माना गया है उसका विवरण इस प्रकार है :—

संवत्	मास अधिक	संवत्	मास अधिक
१८८२	श्रावण	१९१२	श्रावण
१८८५	आषाढ़	१९१५	ज्येष्ठ
१८८८	वैशाख	१९१७	आश्विन
१८९०	भादों	१९२०	श्रावण
१८९३	आषाढ़	१९२३	ज्येष्ठ
१८९६	ज्येष्ठ	१९२६	वैशाख
१८९८	चैत्र	१९२८	भादों
१९०१	श्रावण	१९३१	आषाढ़
१९०४	ज्येष्ठ	१९३४	ज्येष्ठ
१९०७	वैशाख	१९३६	आश्विन
१९०९	भादों	१९३९	श्रावण

३१ अगस्त सन् १९४२ ई० को रात का १२ बजे वस्तुतः पहली सितम्बर के आरम्भ का एक बजे माना गया है और उसी के अनुसार अब समय माना जा रहा है। अतः श्री स्वामीजी महाराज के जीवन-चरित्र में जहाँ कहीं इस प्रकार का उल्लेख हो—५ बजे प्रातःकाल वे भ्रमणार्थ निकले, अथवा यह कि ८ बजे दिन से ही लोग एकत्र होने लगे, इत्यादि—वहाँ पर एक घण्टे के अन्तर का ध्यान रखना चाहिए।

श्री स्वामीजी महाराज के जीवन-चरित्रों से सम्बन्ध रखनेवाले नामों में से जो नाम बदल गया हो उसको यथोचित रूप से स्पष्ट कर देना चाहिए। जैसे :—खुशहालगढ़ का नाम अब गंगापूर है जो कि बी० बी० सी० आई० रेलवे लाइन का एक अच्छा स्टेशन

जयपुर राज्य में है और मथुरा से दक्षिण ओर लगभग एक सौ मील की दूरी पर है।

जीवन-चरित्रों में जो नाम अशुद्ध रूप में अङ्कित हैं उनका स्पष्टीकरण होना चाहिए और उनका शुद्ध रूप जतलाना चाहिए। जैसे :—नर्मदा तट के सिनोर नाम के बदले में छिनौर, छिनूर, छिन्नाड़े या चित्तौड़ नाम ठीक नहीं है।

श्री स्वामीजी महाराज के जीवन-चरित्र में जहाँ कहीं किसी ज़िला या रियासत के प्रधान नगर का उल्लेख रहे वहीं पर उस ज़िला या रियासत के उस स्थान या स्थानों का भी विवरण होना उचित है जो महर्षि द्वारा गौरवान्वित हुए हैं। ऐसी दशा में प्रत्येक ज़िला या रियासत के गौरवान्वित स्थानों की बाबत सुगमता के साथ जानकारी हो सकती है।

अब सन् १९४३ ई० में गङ्गा का दाहिना किनारा (विशेषकर गढ़ मुक्तेश्वर व कानपुर के बीच में) जिन स्थानों पर है उन स्थानों पर अब से लगभग ७० वर्ष पूर्व न था। वास्तव में गङ्गा दाहिने किनारे से बहुत हट गई और बायें किनारे की ओर अधिक हो गई है। निदान उक्त सब बातों तथा अन्य आवश्यक बातों का उल्लेख जीवन-चरित्र में होना अच्छा ही होगा।

यह बात स्पष्ट है कि अब (सन् १९४३ ई० में) ऐसे बहुत ही कम लोग जीवित हैं जिन्होंने श्री स्वामीजी को देखा है। परन्तु श्री स्वामीजी के देखनेवाले लोगों के बेटे व पोते अवश्य जीवित हैं और अनेक ऋषि-भक्त ऐसे हैं जिन्होंने ऋषि के देखनेवालों से बहुत कुछ सुन रक्खा है। ऐसी अवस्था में स्थानों आदि की बाबत बहुत कुछ लिखा जा सकता है।

मैं फिर कहे देता हूँ कि अब भी बहुत कुछ काम हो सकता है। बाद को ज्यों-ज्यों समय अधिक बीतता जायगा त्यों-त्यों कार्य कठिन

तथा असंभव हो जायगा। ईश्वर करे कि लोगों का ध्यान इस ओर आकर्षित हो।

३० दिसम्बर सन् १९४१ ई० को मैं मेरठ गया था। वहाँ आर्य-समाज के पुस्तकालय में कुछ ऐसी पुरानी पत्रिकाएँ मेरी दृष्टि में आईं जिनसे श्री स्वामीजी के जीवन-चरित्र के लिखने में कुछ विशेष सहायता अवश्य मिल सकती है। मेरा ख़याल है कि अजमेर, बम्बई, फ़र्रुख़ाबाद आदि ऐसे समाजों में भी कुछ पत्रिकाएँ होंगी जिनसे जीवन-चरित्र की तैयारी में बहुत लाभ हो सकता है।

कौन नहीं देखता कि श्री स्वामीजी के नाम पर अनेक संस्थाएँ स्थापित हुई हैं। बहुत परिश्रम उनके लिए हुआ है। उनके निमित्त बहुत-सा धन व्यय किया गया है। फलतः श्री स्वामीजी के नाम पर क्या नहीं किया गया। परन्तु कितने खेद की बात है कि अभी तक उनका कोई प्रामाणिक और अच्छा जीवन-चरित्र नहीं तैयार किया गया। क्या अच्छा हो कि अच्छे जीवन-चरित्र के तैयार किये जाने की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट हो और भविष्य में भी त्रुटियाँ (अशुद्धियाँ) ही शुद्ध न समझी जायँ। मेरी हार्दिक इच्छा है कि एक अच्छे ढंग पर कार्य हो और मैं आशा करता हूँ कि यह कार्य किसी न किसी समय ईश्वर की कृपा से अवश्य अच्छे ढंग पर होगा।

कुछ अन्य उपयोगी ग्रन्थ

श्री स्वामीजी महाराज के जीवन-चरित्र के निमित्त जिन ग्रन्थों व पत्र-पत्रिकाओं आदि से काम लेने की आवश्यकता है उनका उल्लेख पिछले पृष्ठों में कुछ हो चुका है; परन्तु जो पुस्तकें उनके चरित्र के निमित्त किसी न किसी रूप में विचार से हितकर हैं उनको यहाँ लिखा जा रहा है :—

सन्दर्भ पुस्तकालय
परिग्रहण कमांक 977

उपदेशमंजरी (हिन्दी)—यह पुस्तक अनेक स्थानों से प्रकाशित हो चुकी है। इसमें श्री स्वामीजी के वे व्याख्यान हैं जो उन्होंने पूना में दिये थे।

भारत-भ्रमण—लेखक बाबू साधुचरणप्रसाद जी। हिन्दी में पाँच खण्डों में:—

प्रथम खण्ड सन् १९०२ ई० में काशी से प्रकाशित। अन्य चार खण्ड सं० १९६९ वि० में श्री वेङ्कटेश्वर प्रेस बम्बई से प्रकाशित*।

The Imperial Gazetteer of India. श्री W. W. Hunter द्वारा सन् १८८१ ई० में लंडन से ९ भागों में प्रकाशित।

The Imperial Gazetteer of India का नवीन संस्करण जो २६ भागों में, सन् १९०९ ई० में, आक्सफोर्ड से प्रकाशित हुआ है।

अनेक ज़िलों तथा रियासतों के गज़ेटियर जो बीसवीं शताब्दी में भिन्न-भिन्न समयों में अँगरेज़ी सरकार द्वारा प्रकाशित हुए हैं।

Dictionary of Indian Biography by C. E. Buckland, सन् १९०६ ई० में Swan Sonnenschein & Co London.

The Indian Year Book (अँग्रेजी) के संस्करण।

Census Reports (अँग्रेजी) के संस्करण।

भारतीय मत-मतान्तर विषयक ग्रन्थ, जैसे अंग्रेजी में History of the Sects of Maharajas or Vallabhacharyas in Western India सन् १८६५ ई० में लण्डन से Trubuners & Company द्वारा प्रकाशित।

Encyclopaedia of Religion and Ethics नाम का अँग्रेजी ग्रन्थ सन् १९०५ ई० में Edinburgh से प्रकाशित। इत्यादि

---

* पाँचों खण्डों में अनेक स्थानों का अच्छा वर्णन है। पाँचों खण्डों में से प्रथम खण्ड भी बम्बई से प्रकाशित हो गया है।—लेखक।

Printed by A. Bose, at the Indian Press Ltd., Benares.